10 स्वतंत्रता के बाद

0865CH10

एक नया और खंडित राष्ट्र

अगस्त 1947 में जब भारत आज़ाद हुआ तो उसके सामने कई बड़ी चुनौतियाँ थीं। बँटवारे की वजह से 80 लाख शरणार्थी पाकिस्तान से भारत आ गए थे। इन लोगों के लिए रहने का इंतजाम करना और उन्हें रोज़गार देना ज़रूरी था। इसके बाद रियासतों की समस्या थी। तकरीबन 500 रियासतें राजाओं या नवाबों के शासन में चल रही थीं। इन सभी को नए राष्ट्र में शामिल होने के लिए तैयार करना एक टेढ़ा काम था। शरणार्थियों और रियासतों की समस्या पर फौरन ध्यान देना लाज़िमी था। लंबे दौर में इस नवजात राष्ट्र को एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था भी विकसित करनी थी जो यहाँ के लोगों की आशाओं और आकांक्षाओं को सबसे अच्छी तरह व्यक्त कर सके।



चित्र 1 *– इलाहाबाद में महात्मा गांधी की अस्थियों का विर्सजन, फरवरी 1948*

अभी स्वतंत्रता को छः महीने भी नहीं हुये थे कि सारा राष्ट्र गहरे शोक में पड़ गया। 30 जनवरी 1948 को कट्टर विचारों वाले नाथूराम गोडसे ने महात्मा गांधी की हत्या कर दी। वह गांधीजी के इस दृढ़ विश्वास से मतभेद रखता था कि हिन्दुओं और मुसलमानों को सदभावना बनाते हुये इकट्ठे रहना चाहिए। उसी शाम हक्के-बक्के राष्ट्र ने आकाशवाणी पर जवाहरलाल नेहरू का भावुक भाषण सुना "दोस्तो, साथियो, हमारी ज़िंदगी की रोशनी बुझ गई और चारों तरफ अँधेरा है... हमारे प्रिय नेता... राष्ट्रपिता अब नहीं रहे।"

1947 में भारत की आबादी काफी बड़ी थी – तकरीबन 34.5 करोड़। यह आबादी भी आपस में बँटी हुई थी। इसमें ऊँची जाति और नीची जाति, बहुल हिंदू समुदाय और अन्य धर्मों को मानने वाले भारतीय थे। इस विशाल देश के लोग तरह-तरह की भाषाएँ बोलते थे, उनके पहनावों में भारी फ़र्क था, उनके खान-पान और काम-धंधों में भारी विविधता थी। इतनी विविधता वाले लोगों को एक राष्ट्र-राज्य के रूप में कैसे संगठित किया जा सकता था?

एकता की समस्या के साथ ही विकास भी एक बड़ी समस्या थी। स्वतंत्रता के समय भारत की एक विशाल संख्या गाँवों में रहती थी। आजीविका के लिए किसान और काश्तकार बारिश पर निर्भर रहते थे। यही स्थिति अर्थव्यवस्था के गैर-कृषि क्षेत्रों की थी। अगर फसल चौपट हो जाती तो नाई, बढ़ई, बुनकर और अन्य कारीगरों की आमदनी पर भी संकट पैदा हो जाता था। शहरों में फैक्ट्री मज़दूर भीड़ भरी झुग्गी बस्तियों में रहते थे जहाँ शिक्षा या स्वास्थ्य सुविधाओं की खास व्यवस्था नहीं थी। इस विशाल आबादी को गरीबी के चंगुल से निकालने के लिए न केवल खेती की उपज बढ़ाना ज़रूरी था बल्कि नए उद्योगों का निर्माण भी करना था जहाँ लोगों को रोज़गार मिल सके।

एकता और विकास की प्रक्रियाओं को साथ-साथ चलना था। अगर भारत के विभिन्न तबकों के बीच मौजूद मतभेदों को दूर न किया जाता तो वे हिंसक और बहुत खतरनाक टकरावों का रूप ले सकते थे। लिहाज़ा ऐसे टकराव देश के लिए मँहगे भी पड़ते थे। कहीं ऊँची जाति और नीची जाति के बीच, कहीं हिंदुओं और मुसलमानों के बीच तो कहीं किसी और वजह से तनाव की आशंका बनी हुई थी। दूसरी तरफ, अगर आर्थिक विकास के लाभ आबादी के बड़े हिस्से को नहीं मिलते हैं तो और ज़्यादा भेदभाव पैदा हो सकता था। ऐसी स्थिति में अमीर और गरीब, शहर और देहात, संपन्न और पिछड़े इलाकों का फ़र्क पैदा हो सकता था।

गतिविधि

कल्पना कीजिए कि आप 1947 में भारत से जाने वाले एक ब्रिटिश अफसर हैं। उसी समय आप अपने घर वालों के नाम खत लिखते हैं जिसमें आप इस बात की चर्चा कर रहे हैं कि अंग्रेज़ों की अनुपस्थिति में भारत का क्या होगा। भारत के भविष्य के बारे में आपकी क्या राय होगी?

नए संविधान की रचना

दिसंबर 1946 से नवंबर 1949 के बीच तकरीबन 300 भारतीयों ने देश के राजनीतिक भविष्य के बारे में लंबा विचार-विमर्श किया। यद्यपि इस "संविधान सभा" की बैठकें नई दिल्ली में आयोजित की गई थीं परंतु इसके सदस्य पूरे देश में फैले हुए थे और वे बहुत सारी राजनीतिक पार्टियों के प्रतिनिधि थे। इन्हीं चर्चाओं के फलस्वरूप भारत का संविधान लिखा गया जिसे 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया।

हमारे संविधान की एक खासियत यह थी कि उसमें **सार्वभौमिक वयस्क** मताधिकार का प्रावधान किया गया था। इसका मतलब यह था कि 21 साल से ज़्यादा उम्र के सभी भारतीयों को प्रांतीय और राष्ट्रीय चुनावों में वोट देने का अधिकार था। यह एक क्रांतिकारी कदम था। इससे पहले कभी भी भारतीयों को खुद अपने नेता चुनने का अधिकार नहीं मिला था। ब्रिटेन और अमरीका जैसे अन्य देशों की जनता को यह अधिकार टुकड़ों-टुकड़ों में

सार्वभौमिक वयस्क–
सभी वयस्क नागरिकों को मत देने का अधिकार



चित्र 2 – संविधान के उद्देश्यों पर रोशनी डालने वाले प्रस्ताव को पढ़ते हुए जवाहरलाल नेहरू।

ही दिया गया था। वहाँ सबसे पहले संपन्न पुरुषों को वोट देने का अधिकार मिला। इसके बाद शिक्षित पुरुषों को भी मताधिकार दिया गया। मज़दूर पुरुषों को काफी लंबे संघर्ष के बाद यह अधिकार मिला। महिलाओं को सबसे अंत में मताधिकार दिया गया – वह भी लंबे जुझारू संघर्ष के बाद। इसके विपरीत, भारत में आज़ादी के कुछ ही समय बाद ये फैसला ले लिया गया था कि देश के सभी स्त्री-पुरुषों को यह अधिकार दिया जाएगा भले ही वे अमीर हों या गरीब, पढ़े-लिखे हों या अनपढ़ हों।

संविधान की दूसरी विशेषता यह थी कि उसमें तमाम जातियों, धर्मों या किसी भी तरह की पृष्ठभूमि से संबंध रखने वाले सभी नागरिकों को कानून की नज़र में समान माना गया। भारत के कुछ लोग चाहते थे कि भारत की राजनीतिक व्यवस्था हिंदू आदर्शों पर आधारित हो और भारत को एक हिंदू देश घोषित किया जाए। अपनी बात के समर्थन में उन्होंने पाकिस्तान का उदाहरण दिया जिसका गठन ही एक खास समुदाय – मुसलमानों – के हितों की रक्षा के लिए किया गया था। परंतु भारतीय प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू का स्पष्ट मत था कि भारत "हिंदू पाकिस्तान" नहीं बन सकता और न ही बनना चाहिए।

मुसलमानों के अलावा भारत में सिख और ईसाइयों की भी बड़ी संख्या थी। इसके अलावा पारसी, जैन तथा अन्य धर्मों के लोग भी थे। नए संविधान में इन सभी समुदायों के लोगों को भी वही अधिकार दिए गए जो अधिकार हिंदुओं को दिए गए थे। चाहे सरकारी या निजी क्षेत्र की नौकरियों का सवाल हो या कानून से संबंधित कोई मामला हो, इन सभी समुदायों के लोगों को भी वैसे ही अवसर देने का प्रावधान किया गया जैसे हिंदुओं को दिए जा रहे थे।

संविधान की तीसरी विशेषता यह थी कि इसमें समाज के निर्धन और सबसे वंचित तबकों के लिए विशेष सुविधाओं की व्यवस्था की गई थी। "भारत के सम्मान" को "कलंकित" करने वाली छुआछूत के चलन को खत्म कर दिया गया। अब तक हिंदुओं के मंदिरों में केवल ऊँची जातियों के लोग ही जाते थे लेकिन अब उन्हें सभी लोगों के लिए खोल दिया गया। जिन्हें अब तक अछूत माना जाता था, अब वे भी मंदिरों में जा सकते थे। एक लंबी बहस के बाद संविधान सभा ने यह भी तय किया कि विधायिका की कुछ सीटें और सरकारी नौकरियों में कुछ हिस्सा "निचली जातियों" के सदस्यों के लिए आरक्षित किया जाए। कुछ लोगों की दलील थी कि अछूत – जिन्हें उस समय हरिजन कहा जाता था – उम्मीदवारों के पास इतने अंक या शैक्षणिक योग्यता नहीं होती कि वे भारतीय प्रशासनिक सेवा जैसी प्रतिष्ठित नौकरियों में जा सकें। परंतु, जैसा कि संविधान सभा के सदस्य एच. जे. खांडेकर ने कहा था, हरिजनों की "अक्षमता के लिए" ऊँची जातियाँ ज़िम्मेदार हैं। अपने सुविधासंपन्न सहकर्मियों को संबोधित करते हुए खांडेकर ने कहा था :

> हमें हज़ारों साल तक दबाकर रखा गया है। आप लोगों ने हमें अपनी सेवा में लगाए रखा और हमें इस कदर दबाया है कि अब न केवल हमारे मस्तिष्क और शरीर, बल्कि हमारा हृदय भी काम नहीं करता और न ही हम आगे बढ़ पाने में सक्षम हैं।

भूतपूर्व "अछूतों" के साथ-साथ आदिवासियों या अनुसूचित जनजातियों को भी विधायिका और नौकरियों में आरक्षण दिया गया। अनुसूचित जातियों की तरह इन भारतीयों को भी वंचित रखा गया था और उनके साथ भेदभाव किया गया था। आदिवासी आधुनिक स्वास्थ्य सुविधाओं और शिक्षा से वंचित थे। उनकी ज़मीन और जंगलों पर समुदाय से बाहर के ताकतवर लोगों का कब्ज़ा होता जा रहा था। संविधान से उन्हें जो नए अधिकार मिले उनका उद्देश्य इस स्थिति में सुधार लाने का था।

संविधान सभा के सदस्यों ने केंद्र और राज्य सरकारों की शक्तियों और अधिकारों के बँटवारे पर भी लंबी चर्चा की। कुछ लोगों का मानना था कि केंद्र के हित सबसे महत्त्वपूर्ण होने चाहिए। उनका कहना था कि यदि केंद्र मज़बूत होगा तो "तभी वह पूरे देश की उन्नति के लिए सोचने और योजना बनाने में सक्षम होगा।" कई अन्य सदस्यों का मानना था कि राज्यों को ज़्यादा स्वायत्तता और आज़ादी मिलनी चाहिए। मैसूर के एक सदस्य का कहना था कि मौजूदा व्यवस्था में "लोकतंत्र दिल्ली में केंद्रित है और इसलिए बाकी देश में वह इसी भावना और अर्थ में साकार नहीं हो रहा है।"

स्रोत 1

हमें उन्हें सुरक्षा और अधिकार ज़रूर देने चाहिए।

मुख्यमंत्रियों को लिखे एक पत्र में नेहरू ने कहा था :

> ...हमारे पास एक मुसलिम अल्पसंख्यक समुदाय है जो संख्या की दृष्टि से इतना बड़ा है कि अगर वे चाहें तो भी कहीं नहीं जा सकते। यह एक बुनियादी तथ्य है जिसके बारे में बहस की कोई गुंजाइश नहीं है। पाकिस्तान की तरफ से चाहे जितना उकसावा हो और वहाँ के गैर-मुसलमानों पर चाहे जो भी अत्याचार हो रहे हों, हमें इस अल्पसंख्यक समुदाय के साथ सभ्य ढंग से व्यवहार करना है। हमें इस समुदाय को भी वही सुरक्षा और अधिकार देने होंगे जो किसी लोकतांत्रिक राज्य के नागरिकों को मिलते हैं।

गतिविधि

एक मुसलिम परिवार में बाप-बेटे के बीच हो रही बातचीत की कल्पना कीजिए। बेटा मानता है कि विभाजन के बाद परिवार को पाकिस्तान चले जाना चाहिए जबकि पिता का विश्वास है कि उन्हें भारत में ही रहना चाहिए। इस अध्याय (तथा अध्याय 11) में दी गई सूचनाओं के आधार पर अभिनय करके बताएँ कि दोनों के तर्क क्या होंगे।



चित्र 3 – *डॉ. बी.आर. अंबेडकर।*

डॉ. बी.आर. अंबेडकर (1891–1956) को प्यार से लोग बाबासाहेब के नाम से पुकारते थे। वह एक मराठी भाषी दलित परिवार से थे। डॉ. अंबेडकर एक जाने-माने वकील और अर्थशास्त्री थे। उन्हें दलितों का एक महान नेता और भारतीय संविधान का जनक माना जाता है।

मद्रास के एक सदस्य का आग्रह था कि "राज्य स्तर पर लोगों की कुशलक्षेम का प्रारंभिक भार प्रांतीय सरकारों के ऊपर ही होना चाहिए।"

इन मतभेदों को दूर करने के लिए संविधान में विभिन्न विषयों को तीन सूचियों में बाँट दिया गया – केंद्रीय सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची। केंद्रीय सूची में कराधान, रक्षा और विदेशी मामलों आदि को रखा गया। ये ऐसे विषय थे जो केवल केंद्र सरकार के अधीन थे। राज्य सूची में शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे विषय लिए गए जिनकी ज़िम्मेदारी मुख्य रूप से राज्य सरकारों के ऊपर थी। समवर्ती सूची में वन एवं कृषि आदि ऐसे विषयों को रखा गया जिनके बारे में केंद्र और राज्य सरकारें, दोनों संयुक्त रूप से फैसला ले सकते थे।

संविधान सभा में भाषा के सवाल पर बड़ी तीखी बहस हुई। बहुत सारे लोगों का मानना था कि अंग्रेज़ों के साथ अंग्रेज़ी भाषा को भी विदा कर दिया जाना चाहिए। उनका कहना था कि अंग्रेज़ी की जगह हिंदी को अपनाया जाना चाहिए। परन्तु जो लोग हिंदी नहीं बोलते थे उनकी राय अलग थी। संविधान सभा में बोलते हुए टी.टी. कृष्णमाचारी ने "दक्षिण के लोगों की ओर से चेतावनी" देते हुए कहा कि अगर उन पर हिंदी थोपी गई तो वहाँ के बहुत सारे लोग भारत से अलग हो जाएँगे। इस विवाद से बचने के लिए आखिरकार बीच का रास्ता निकाल लिया गया। संविधान निर्माताओं ने हिंदी को भारत की "राजभाषा" का दर्जा दिया जबकि अदालतों, सेवाओं, विभिन्न राज्यों के बीच संचार आदि के लिए अंग्रेज़ी के इस्तेमाल का फैसला लिया गया।

संविधान की रचना में बहुत सारे भारतीयों ने योगदान दिया था। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान संभवत: डॉ. बी.आर. अंबेडकर का था जो संविधान सभा की प्रारूप समिति के अध्यक्ष थे और जिनके नेतृत्व में दस्तावेज़ को अंतिम रूप दिया गया था। संविधान सभा के सामने अपने आखिरी भाषण में डॉ. अंबेडकर ने कहा कि राजनीतिक लोकतंत्र के साथ-साथ आर्थिक और सामाजिक लोकतंत्र भी ज़रूरी है। यदि लोगों को वोट डालने का अधिकार दे दिया जाता है तो इससे अमीर-गरीब या ऊँची और नीची जातियों का फासला अपने-आप खत्म नहीं हो जाएगा। उन्होंने कहा कि नए संविधान के साथ भारत –

> अंतर्विरोधों के एक नए युग में प्रवेश करने जा रहा है। राजनीति में हमारे पास समानता होगी और सामाजिक व आर्थिक जीवन में हम असमानता की राह पर चलेंगे। राजनीति में हम एक व्यक्ति, एक

गतिविधि

अंग्रेज़ी को भारत की एक भाषा के रूप में बनाए रखने के फैसले के आज की तारीख में होने वाले एक फायदे और एक नुकसान पर अपनी कक्षा में चर्चा कीजिए।

वोट और एक मूल्य के सिद्धांत का पालन करेंगे। इसके विपरीत, अपनी सामाजिक एवं आर्थिक संरचना के फलस्वरूप हम सामाजिक और आर्थिक जीवन में एक व्यक्ति, एक मूल्य के सिद्धांत का निषेध करते रहेंगे।

राज्यों का गठन कैसे किया जाए?

1920 के दशक में स्वतंत्रता संघर्ष की मुख्य पार्टी – भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस – ने आश्वासन दिया था कि जैसे ही देश आज़ाद हो जाएगा, प्रत्येक बड़े **भाषायी** समूह का अपना अलग प्रांत होगा। आज़ादी मिलने के बाद कांग्रेस ने इस आश्वासन को पूरा करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया। क्योंकि भारत धर्म के आधार पर बँट चुका था इसलिए महात्मा गांधी की तमाम इच्छाओं और प्रयासों के बावजूद यह स्वतंत्रता एक राष्ट्र को नहीं बल्कि दो राष्ट्रों को मिल रही थी। देश विभाजन के फलस्वरूप हिंदुओं और मुसलमानों के बीच हुए भीषण दंगों में 10 लाख से ज़्यादा लोग मारे गए थे। ऐसे में यह चिंता स्वाभाविक थी कि क्या हमारा देश भाषा के आधार पर इस तरह के और बँटवारे झेल सकता था?

भाषायी – भाषा से संबंधित

प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू और उप-प्रधानमंत्री वल्लभभाई पटेल, दोनों ही भाषा के आधार पर राज्यों के गठन की नीति के विरोधी थे। विभाजन के बाद नेहरू ने कहा था कि "उपद्रवकारी प्रवृत्तियाँ सिर उठा रही हैं" जिन पर अंकुश लगाने के लिए राष्ट्र को शक्तिशाली और एकजुट होना चाहिए। वरना, जैसा कि पटेल ने कहा :

> ...इस समय भारत की पहली और आखिरी ज़रूरत यह है कि उसे एक राष्ट्र बनाया जाए...। राष्ट्रवाद को बढ़ावा देने वाली हर चीज़ आगे बढ़नी चाहिए और उसके रास्ते में रुकावट डालने वाली हर चीज़ को खारिज कर दिया जाना चाहिए...। हमने यही कसौटी भाषायी प्रांतों के सवाल पर भी अपनाई है और इस कसौटी के हिसाब से हमारी राय में (इस माँग को) समर्थन नहीं दिया जा सकता।

क्योंकि कांग्रेस के नेता अपने वायदे से पीछे हट रहे थे इसलिए जगह-जगह असंतोष पैदा हुआ। कन्नड़भाषी, मलयालम भाषी, मराठी भाषी, सभी अपने-अपने राज्य के इंतज़ार में थे। सबसे गहरा असंतोष मद्रास प्रेज़ीडेंसी के तेलुगू भाषी ज़िलों में दिखाई दिया। जब 1952 के आम चुनावों में नेहरू वहाँ चुनाव प्रचार के लिए गए तो लोगों ने उन्हें काले झंडे दिखाए और "हमें आंध्र चाहिए" के नारे लगाए। उसी साल अक्तूबर में वयोवृद्ध गांधीवादी पोट्टी श्रीरामुलु तेलुगूभाषियों के हितों की रक्षा के लिए आंध्र राज्य के गठन की माँग करते हुए भूख हड़ताल पर बैठ गए। जैसे-जैसे अनशन आगे बढ़ा, बहुत सारे लोग श्रीरामुलु के समर्थन में आगे आने लगे। जगह-जगह लोग हड़ताल करने लगे और जुलूस निकालने लगे।

चित्र 4 – गांधीवादी नेता पोट्टी श्रीरामुलु। तेलुगूभाषियों के लिए अलग राज्य की माँग करते हुए अनशन पर ही उनकी मृत्यु हो गई थी।



58 दिन के अनशन के बाद 15 दिसंबर 1952 को पोट्टी श्रीरामुलु का देहांत हो गया। जैसा कि एक अखबार ने लिखा था, "श्रीरामुलु के देहांत की खबर ने पूरे आंध्र को अस्त-व्यस्त कर डाला।" विरोध इतना व्यापक और गहरा था कि केंद्र सरकार को आखिरकार यह माँग माननी पड़ी। इस तरह, 1 अक्तूबर 1953 को आंध्र के रूप में एक नए राज्य का गठन हुआ, जो बाद में आंध्र प्रदेश बना।

आंध्र की स्थापना के बाद अन्य भाषायी समुदाय भी अपने-अपने अलग राज्यों की माँग करने लगे। फलस्वरूप, एक राज्य पुनर्गठन आयोग का गठन किया गया जिसने 1956 में अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंप दी। आयोग ने सुझाव दिया कि असमिया, बंगला, उड़िया, तमिल, मलयालम, कन्नड़ और तेलुगू भाषियों के लिए अलग-अलग प्रांतों का गठन करने के उद्देश्य से जिलों और प्रांतों की सीमा को पुनः तय किया जाए। उत्तर भारत के विशाल हिंदी भाषी क्षेत्र को बाँट कर कई राज्य बना दिए गए। कुछ समय बाद, 1960 में बम्बई प्रांत को मराठी और गुजराती भाषी, दो अलग राज्यों में बाँट दिया गया। 1966 में पंजाब का विभाजन हुआ और हरियाणा को अलग राज्य के रूप में मान्यता दी गई। पंजाब में पंजाबी भाषियों (जिनमें से ज़्यादातर सिख थे) और हरियाणा में हरियाणवी या हिंदी बोलने वालों की बहुतायत थी।

भाषायी राज्यों का गठन



चित्र 5 (क)
14 अगस्त 1947 से पहले भारतीय प्रांत और रियासतें।

(गुलाबी)	रियासतें
(पीला)	ब्रिटिश भारत



भूतपूर्व रियासतें*

अन्य राज्य

* जब रियासतों के शासक भारत अथवा पाकिस्तान से जुड़ने के लिए मान गये या फिर हरा दिये गये तो उनकी रियासतें खत्म हो गईं। परन्तु 31 अक्तूबर 1956 तक कई ऐसी रियासतों को प्रशासनिक इकाइयों के रूप में बनाये रखा गया। इसीलिए 1947-48 से 31 अक्तूबर 1956 की कलावधि के लिए इन्हें भूतपूर्व रियासत कहा गया है।

चित्र 5 (ख) *– 1 नवंबर 1956 से पहले भारतीय राज्य।*

गतिविधि

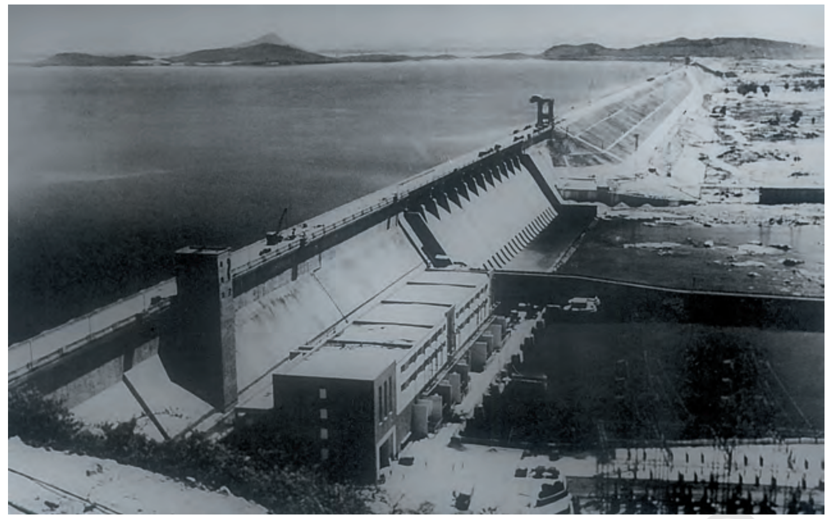
चित्र 5 (क), 5 (ख) और 5 (ग) को देखें। ध्यान दें कि चित्र 5 (ख) में रियासतें दिखाई नहीं दे रही हैं। उन राज्यों को पहचानें जिनका 1956 और बाद में गठन किया गया था। उन राज्यों की कौन सी भाषाएँ थीं?



चित्र 5 (ग) *– 1975 में भारतीय राज्य।*

चित्र 6 – महानदी के पानी को रोकने के लिए बनाया गया पुल।

स्वतंत्र भारत में पुल और बाँध विकास का प्रतीक बन गए थे।



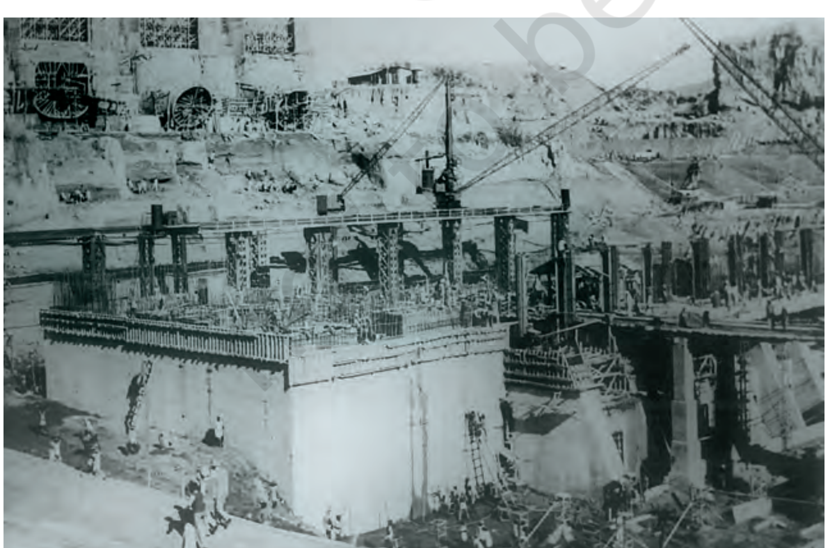
राज्य – सरकार से संबंधित (ध्यान दें कि 'राज्य' शब्द का यह अर्थ देश के विभिन्न राज्यों या प्रांतों से नहीं है)

विकास की योजनाएँ बनाना

भारत और भारतीयों को गरीबी से मुक्त कराने और आधुनिक तकनीकी एवं औद्योगिक आधार निर्मित करना नए भारत का एक बड़ा लक्ष्य था। 1950 में सरकार ने आर्थिक विकास के लिए नीतियाँ बनाने और उनको लागू करने के लिए एक 'योजना आयोग' का गठन किया। इस बारे में ज़्यादातर सहमति थी कि भारत "मिश्रित अर्थव्यवस्था" के रास्ते पर चलेगा। यहाँ **राज्य** और निजी क्षेत्र, दोनों ही उत्पादन बढ़ाने और रोज़गार पैदा करने में महत्त्वपूर्ण और परस्पर पूरक भूमिका अदा करेंगे। किस क्षेत्र की क्या भूमिका होगी – अर्थात कौन से उद्योग सरकार द्वारा और कौन से उद्योग बाजार द्वारा यानी निजी उद्योगपतियों द्वारा लगाए जाएँगे, विभिन्न क्षेत्रों और राज्यों के बीच किस तरह का संतुलन बनाया जायेगा इन सबको परिभाषित करना योजना आयोग का काम था।

चित्र 7 – गांधीसागर बाँध पर चल रहा काम।

मध्य प्रदेश स्थित चम्बल नदी पर बनाए गए चार बाँधों में से यह पहला था। इसका निर्माण 1960 में पूरा हुआ।



1956 में दूसरी पंचवर्षीय योजना तैयार की गई। इस योजना में इस्पात जैसे भारी उद्योगों और विशाल बाँध परियोजनाओं आदि पर सबसे ज़्यादा जोर दिया गया। ये काम सरकारी नियंत्रण के अंतर्गत रखे गए। भारी उद्योग पर यह ज़ोर और अर्थव्यवस्था की राज्य नियंत्रण की कोशिशें अगले कुछ दशकों तक आर्थिक नीति को प्रभावित करती रहीं। इस पद्धति के बहुत सारे समर्थक थे तो कुछ मुखर विरोधी भी थे। कुछ लोगों को लगता था कि इस प्रणाली में खेती पर पर्याप्त ज़ोर नहीं दिया जा रहा है।

स्रोत 2

पंचवर्षीय योजनाओं पर नेहरू के विचार

प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू योजना प्रक्रिया के भारी समर्थक थे। उन्होंने विभिन्न राज्यों के मुख्यमंत्रियों के नाम लिखे अपने पत्रों में नियोजन के आदर्शों और उद्देश्यों की व्याख्या की है। 22 दिसंबर 1952 के एक पत्र में उन्होंने लिखा था :

> ...पंचवर्षीय योजना के पीछे भारत की एकता और देश के विभिन्न जन-समूहों के विराट आपसी सहयोग की अवधारणा निहित है...। हमें यह बात हमेशा याद रखनी चाहिए कि इस प्रक्रिया में सिर्फ सरकारी तंत्र का ही महत्व नहीं होता बल्कि जनता के उत्साह और सहयोग का महत्व इससे भी ज़्यादा है। हमारे लोगों को एक विशाल उद्यम में साझेदारी का उत्साह, उन्हें अपने अगले उद्देश्य की ओर बढ़ते सहयात्री जैसा अहसास होना चाहिए। बेशक योजना बहुत सारे अर्थशास्त्रियों, सांख्यिकी विशेषज्ञों और ऐसे ही दूसरे लोगों की गणनाओं पर आधारित हो सकती है, और होगी। परंतु केवल आंकड़ों और संख्याओं से हालाँकि ये महत्त्वपूर्ण है, ये किसी योजना में जीवन पैदा नहीं करते। जीवन का यह उच्छ्‌वास तो कहीं और से आता है। अब यह हमारी ज़िम्मेदारी है कि ठंडे अक्षरों में लिखी योजना को एक ऐसा जीवंत, गतिशील उद्यम बना दें कि वह लोगों की कल्पनाओं को साकार कर सके।

चित्र 8 *– भिलाई इस्पात संयंत्र में जवाहरलाल नेहरू।*

भिलाई स्थित इस्पात कारखाने की स्थापना 1959 में तत्कालीन सोवियत संघ की सहायता से की गई थी। छत्तीसगढ़ के पिछड़े ग्रामीण इलाके में स्थित यह कारखाना आधुनिक भारत के विकास का एक महत्त्वपूर्ण प्रतीक बन गया था।



कुछ लोगों का कहना था कि प्राथमिक शिक्षा की उपेक्षा हो रही है। कुछ अन्य लोगों का मानना था कि आर्थिक नीतियों के कारण पर्यावरण पर पड़ रहे प्रभावों पर उचित ध्यान नहीं दिया गया है। महात्मा गांधी की अनुयायी मीरा बहन ने 1949 में लिखा था, "विज्ञान और मशीनरी के द्वारा उसे (मानवता को) कुछ समय तक भारी फायदा हो सकता है लेकिन आखिरकार तबाही ही मिलेगी। हमें कुदरत के संतुलन का अध्ययन करके उसके नियमों के हिसाब से अपनी ज़िंदगी चलानी चाहिए, तभी हम स्वस्थ और नैतिक रूप से सभ्य प्रजाति के रूप में जीवित रह पाएँगे।"

गतिविधि

क्या मीरा बहन की यह मान्यता सही थी कि विज्ञान और मशीनरी मानव सभ्यता के लिए समस्याएँ खड़ी कर देंगे। इस बात पर अपनी कक्षा में चर्चा कीजिए। इस चर्चा के लिए आप औद्योगिक प्रदूषण और जंगलों के विनाश से हमारी दुनिया पर पड़ रहे प्रभावों जैसे उदाहरणों के बारे में सोच सकते हैं।

एक स्वतंत्र विदेश नीति की चाह



चित्र 9 – संयुक्त राष्ट्र में जवाहरलाल नेहरू और कृष्णा मेनन।

कृष्णा मेनन ने 1952 से 1962 के बीच संयुक्त राष्ट्र में भारतीय प्रतिनिधि मंडलों का नेतृत्व किया और गुटनिरपेक्षता की नीति के पक्ष में आवाज़ उठाई।

जिस समय भारत को आज़ादी मिली तब तक दूसरे विश्व युद्ध की तबाही को कुछ ही समय हुआ था। 1945 में गठित की गई नई अंतर्राष्ट्रीय संस्था – संयुक्त राष्ट्र – अभी अपने शैशवकाल में थी। 1950 और 1960 के दशकों में शीत युद्ध का उदय हुआ, शक्तिशाली देशों के बीच प्रतिद्वंद्विता पैदा हुई और अमरीका व सोवियत संघ के बीच वैचारिक टकराव गहरे होते गए। फलस्वरूप दोनों देशों ने अपने-अपने समर्थक देशों को मिलाकर सैनिक गठबंधन बना लिए। यही समय था जब औपनिवेशिक साम्राज्य ध्वस्त हो रहे थे और बहुत सारे देश स्वतंत्रता प्राप्त कर रहे थे। प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू नवस्वाधीन भारत के विदेश मंत्री भी थे। उन्होंने इस संदर्भ में स्वतंत्र भारत की विदेश नीति की रूपरेखा तैयार की। गुटनिरपेक्ष आंदोलन इसी विदेश नीति का मूल आधार था।

मिस्र, यूगोस्लाविया, इंडोनेशिया, घाना और भारत के राजनेताओं के नेतृत्व में गुटनिरपेक्ष आंदोलन में दुनिया के देशों से आह्वान किया कि वे इन दोनों मुख्य सैनिक गठबंधनों में शामिल न हों। परंतु गठबंधनों से दूर रहने की इस नीति का मतलब "अलग-थलग" या "तटस्थ" रहना नहीं था। अलग-थलग रहने का मतलब था कि विभिन्न देश अंतर्राष्ट्रीय मामलों से दूर रहें जबकि भारत जैसे गुटनिरपेक्ष देश तो अमेरिकी और सोवियत गठबंधनों के बीच सुलह-सफाई में एक अहम भूमिका अदा कर रहे थे। इन देशों ने युद्ध को टालने के प्रयास किए और अकसर युद्ध के खिलाफ मानवतावादी और नैतिक रवैया अपनाया। परंतु विभिन्न कारणों से भारत सहित बहुत सारे गुटनिरपेक्ष देशों को युद्ध का सामना करना पड़ा।

1970 के दशक तक बहुत सारे देश गुटनिरपेक्ष आंदोलन के सदस्य बन चुके थे।



चित्र 10 – बांडुंग, इंडोनेशिया में एशिया और अफ़्रीका के नेताओं की बैठक, 1955

इस प्रसिद्ध सम्मेलन में 29 से ज़्यादा नवस्वाधीन देशों के प्रतिनिधियों ने इस बात की चर्चा की थी कि अफ़्रीका-एशिया के देश उपनिवेशवाद और पश्चिमी प्रभुत्व के विरुद्ध अपने प्रयास किस तरह जारी रख सकते हैं।

राष्ट्र के साठ वर्षों के बाद

15 अगस्त 2007 को हमने एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में अपनी साठवीं वर्षगाँठ मनाई थी। इस दौरान हमारे देश का प्रदर्शन कैस रहा? संविधान में तय किए गए आदर्शों को हम किस हद तक साकार कर पाए?

भारत अभी भी एक है और लोकतांत्रिक राह पर चल रहा है। यह गर्व करने लायक उपलब्धि है। बहुत सारे विदेशी प्रेक्षकों का मानना था कि भारत एक देश के रूप में ज़्यादा समय तक टिक नहीं पाएगा। उन्हें लगता था कि भारत का प्रत्येक क्षेत्र या भाषायी समूह अपने अलग राष्ट्र की माँग करेगा और उसके टुकड़े-टुकड़े हो जाएँगे। कुछ विशेषज्ञों को लगता था कि भारत सैनिक शासन के कब्ज़े में आ जाएगा। परंतु ये सारी आशंकाएँ निर्मूल साबित हुई हैं। आज़ादी से अब तक 13 आम चुनाव हो चुके हैं और राज्यों तथा स्थानीय निकायों के लिए सैकड़ों चुनाव हो चुके हैं। हमारे यहाँ स्वतंत्र प्रेस है और एक स्वतंत्र न्यायपालिका है। इसके अलावा, यहाँ के लोगों की भाषायी विविधता या धार्मिक विविधता भी राष्ट्रीय एकता की राह में रुकावट नहीं बन पाई है।

परंतु दूसरी ओर यह भी सच है कि आज भी हमारे देश में गहरे मतभेद बने हुए हैं। संवैधानिक गारंटियों के बावजूद अछूत समुदाय – या जिन्हें अब दलित कहा जाता है – आज भी हिंसा और भेदभाव से जूझ रहे हैं। ग्रामीण भारत के बहुत सारे भागों में अभी भी वे साझा जल स्रोतों, मंदिरों, मैदानों और अन्य सार्वजनिक स्थानों का इस्तेमाल नहीं कर सकते। संविधान में दिए गए धर्मनिरपेक्ष आदर्शों के बावजूद बहुत सारे राज्यों में विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच कई बार टकराव हो चुके हैं। और सबसे परेशानी की बात यह है कि इस बीच अमीर और गरीब का फासला लगातार बढ़ता गया है। भारत के कुछ भागों और कुछ समूहों को आर्थिक विकास से भारी फायदा हुआ है। वे आलीशान घरों में रहते हैं, मँहगे रेस्टोरेंट्स में खाना खाते हैं, अपने बच्चों को मँहगे निजी स्कूलों में भेजते हैं और विदेशों में छुट्टियों पर बेहिसाब पैसा उड़ाते हैं। दूसरी ओर बहुत सारे लोग आज भी गरीबी की रेखा से नीचे हैं। शहरी झुग्गी बस्तियों या बंजर देहात में रहने वाले ऐसे बहुत सारे लोग अपने बच्चों को स्कूल भी नहीं भेज पाते।



चित्र 11 – *बम्बई स्थित धारावी दुनिया की सबसे बड़ी झुग्गी बस्तियों में से एक है।*
इसके दूर वाले सिरे पर आप गगनचुंबी इमारतें देख सकते हैं।

हमारा संविधान कानून की नज़र में सबको बराबर मानता है लेकिन असली ज़िंदगी में कुछ भारतीय औरों के मुकाबले ज़्यादा बराबर हैं। स्वतंत्रता के समय तय की गई कसौटियों के हिसाब से देखें तो भारतीय गणतंत्र बहुत बड़ी सफलता का दावा नहीं कर सकता। लेकिन यह भी सच है कि वह विफल नहीं हुआ है।

अन्यत्र

श्रीलंका में क्या हुआ

1956 में, जिस समय भारत में भाषा के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन किया जा रहा था, उसी समय श्रीलंका (तत्कालीन नाम सीलोन) की संसद ने एक कानून पारित करके सिंहला भाषा को देश की राजभाषा का दर्जा दे दिया। इस कानून के जरिए सिंहला भाषा को सभी सरकारी स्कूल-कॉलेजों, सरकारी परीक्षाओं और अदालतों की भाषा बना दिया गया। श्रीलंका के उत्तर में रहने वाले तमिलभाषी अल्पसंख्यकों ने इस नए कानून का विरोध किया। एक तमिल सांसद ने कहा कि "जब आप मुझसे मेरी भाषा छीन लेते हैं तो आप मेरा सब कुछ मुझसे छीन लेते हैं।" एक और नेता ने चेतावनी दी, "आप सीलोन को बाँटना चाहते हैं। निश्चिंत रहिए। मैं आश्वासन देता हूँ कि (आपको) एक विभाजित सीलोन ही मिलेगा।" सिंहला भाषी एक विपक्षी सदस्य ने कहा था कि अगर सरकार अपना रुख नहीं बदलती है और इस कानून पर अड़ी रहती है तो "इस छोटे से देश में से दो टूटे-फूटे रक्तरंजित देश भी पैदा हो सकते हैं।"



चि 12 – बंदूक लिए हुए तमिल उग्रवादी– श्रीलंका में गृहयुद्ध का प्रतीक।

पिछले कई दशकों से श्रीलंका में गृह युद्ध चल रहा है जो इसी कारण पैदा हुआ कि वहाँ के तमिलभाषी अल्पसंख्यकों पर सिंहला भाषा थोपी जा रही है। और एक अन्य दक्षिण एशियाई देश – पाकिस्तान – भी इसलिए दो टुकड़ों में बँट गया था क्योंकि पूर्वी पाकिस्तान के बंगला भाषी लोगों को लगता था कि पाकिस्तान में उनकी भाषा को दबाया जा रहा है। इसके विपरीत भारत एकीकृत राष्ट्र के रूप में कायम रहा है। कुछ हद तक इसलिए कि यहाँ बहुत सारी क्षेत्रीय भाषाओं को फलने-फूलने का मौका दिया गया। अगर हिंदी को उसी तरह दक्षिणी भारत पर थोप दिया जाता जिस तरह पूर्वी पाकिस्तान पर उर्दू या उत्तरी श्रीलंका पर सिंहला भाषा को थोप दिया गया था तो शायद भारत भी गृह युद्धों में उलझ कर बिखर जाता। जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेल की आशंकाओं को निर्मूल साबित करते हुए भाषायी राज्यों ने भारत की एकता के लिए कभी खतरा पैदा नहीं किया बल्कि उन्होंने इस एकता को और गहराई दी है। इससे पता चलता है कि जब एक बार अपनी भाषा के दबने का भय खत्म हो जाता है तो विभिन्न भाषायी समूह एक विशाल राष्ट्र के अंग के रूप में सहज आगे बढ़ने लगते हैं।

आइए कल्पना करें

आप एक आदिवासी तथा एक आरक्षण-विरोधी व्यक्ति की बहस सुन रहे हैं। कल्पना कीजिए कि दोनों व्यक्ति अपनी ओर से क्या दलील दे रहे होंगे? इस चर्चा को अभिनय करके दिखाइए।

फिर से याद करें

1. नवस्वाधीन भारत के सामने कौन सी तीन समस्याएँ थीं?
2. योजना आयोग की क्या भूमिका थी?
3. रिक्त स्थान भरें :

   (क) केंद्रीय सूची में ......, ... और ...... विषय रखे गए थे।

   (ख) समवर्ती सूची में ...... और ...... विषय रखे गए थे।

   (ग) वह आर्थिक योजना जिसमें सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों को विकास में भूमिका दी गई थी, उसे ...... मॉडल कहा जाता था।

2020-21

(घ) ...... की मृत्यु से इतना ज़बरदस्त आंदोलन पैदा हुआ कि सरकार को आंध्र भाषी राज्य के गठन की माँग को मानना पड़ा।

4. सही या गलत बताएँ :

(क) आज़ादी के समय ज़्यादातर भारतीय गाँवों में रहते थे।

(ख) संविधान सभा कांग्रेस पार्टी के सदस्यों से मिलकर बनी थी।

(ग) पहले राष्ट्रीय चुनावों में केवल पुरुषों को ही वोट डालने का अधिकार दिया गया था।

(घ) दूसरी पंचवर्षीय योजना में भारी उद्योगों के विकास पर जोर दिया गया था।

आइए विचार करें

5. "राजनीति में हमारे पास समानता होगी और सामाजिक व आर्थिक जीवन में हम असमानता की राह पर चलेंगे" कहने के पीछे डॉ. अंबेडकर का क्या आशय था?

6. स्वतंत्रता के बाद देश को भाषा के आधार पर राज्यों में बाँटने के प्रति हिचकिचाहट क्यों थी?

7. एक कारण बताइए कि आज़ादी के बाद भी भारत में अंग्रेज़ी क्यों जारी रही।

8. आज़ादी के बाद प्रारंभिक दशकों में भारत के आर्थिक विकास की कल्पना किस तरह की गई थी?

आइए करके देखें

9. मीरा बहन कौन थीं? उनके जीवन और आदर्शों के बारे में पता लगाएँ।

10. पाकिस्तान में भाषा के आधार पर हुए उन विवादों के बारे में और पता लगाएँ जिनकी वजह से बांगलादेश का जन्म हुआ। बांगलादेश को पाकिस्तान से आज़ादी कैसे मिली?

टिप्पणी